साहित्य साधना

डॉ. देवीदास इंगळे गौरव ग्रन्थ

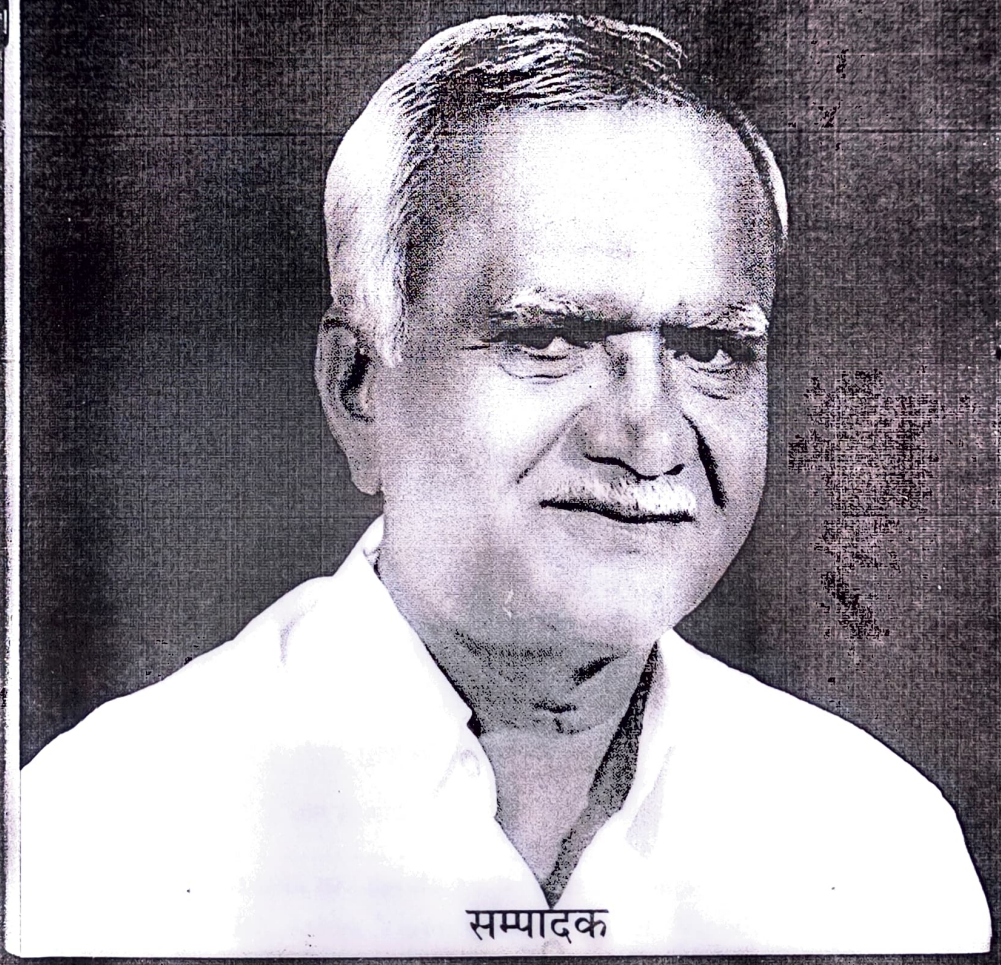

सम्पादक

डॉ. अशोक मर्डे

डॉ. विनोदकुमार वायचळ

☞ इस पुस्तक के सर्वाधिकार सुरक्षित हैं । सम्पादक एवं प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश की फोटोकॉपी एवं रिकॉर्डिंग सहित इलेक्ट्रॉनिक अथवा मशीनी, किसी भी माध्यम से अथवा ज्ञान के संग्रहण एवं पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा, किसी भी रूप में, पुनरुत्पादित अथवा संचार प्रसारित नहीं किया जा सकता ।

पुस्तक	: साहित्य साधना (डॉ. देवीदास इंगळे गौरव ग्रन्थ)
सम्पादक	: डॉ. अशोक वसंतराव मर्डे डॉ विनोदकुमार विलासराव वायचळ 'वेदार्थ'
आई.एस.बी.एन.	: 978-93-91913-00-7
संस्करण	: प्रथम, सन् 2021
©	: सम्पादक
मूल्य	: ₹ 795.00 मात्र
प्रकाशक	: अमन प्रकाशन 104-ए /80 सी, रामबाग, कानपुर-208 012 (उ.प्र.) मो. : 09839218516, 9044344050 फोन : 0512-3590496 (ऑफिस)
शब्द सज्जा	: अमन ग्राफिक्स, रामबाग, कानपुर
मुद्रक	: आर.बी.ऑफसेट प्रिंटर्स, नौबस्ता, कानपुर

SAHITYA SADHNA (Dr. Devidas Engley Gourav Granth)

Edited by : **Dr. Ashok Vasantraw Marde, Dr. Vinodkumar Vaychal**

Price : Rs. Seven Hundred Ninty Five Only

संपादकीय

आदरणीय गुरू
विश्वविद्यालय, औरंगाबा
देवीदास इंगळे जी के
गौरव ग्रंथ पाठकों को सु
हैं।

डॉ. बाबासाहेब
हिंदी अध्ययन मंडल के
कृतित्व से आप सभी प
स्वामी विवेकानंद शिक्षण
संस्था के रामकृष्ण परम
लम्बीसेवा के पश्चात् हिंद
हैं। प्रो. डॉ. इंगळे जी
अध्यापक के रूप में सु
परीक्षा में सर्व प्रथम आने
था। उन्होंने 'स्वातंत्र्योत्तर
विषय पर विद्यावाचस्पति

वे विगत 36 वर्षों
तथा अनुसंधान एवं प्रचार
हैं। अपने कार्य काल में
प्राप्त की तथा 5 छात्रों ने
तक 17 पुस्तकों का लेख
उसी प्रकार आप के अ
पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशि
तथा महत्वपूर्ण क्षेत्रों में क
पुणे, कोल्हापुर, सोलापुर,
आदि विश्वविद्यालयों के ल

स्वामी विवेकानंद
होने के कारण आपका
आपने नौकरी की, हर ज
वर्षों से आप मराठवाडा में
के महाविद्यालयों में वे छ
अत्यधिक वर्ष उस्मानाबाद
महाविद्यालय में कार्यरत
दूसरी बार अध्यक्ष के

14	राग–विराग के अनुरागी : श्रीलाल शुक्ल *डॉ. विनय चौधरी*	84–88
15	देश और विदेश में हिन्दी भाषा की स्थिति *प्रो. डॉ. मुकुंद गायकवाड़*	89–94
16	वर्तमान परिप्रेक्ष्य में संत कवि रैदास के विचार *प्रो. डॉ. आसाराम बेवले*	95–100
17	21 वीं सदी के हिन्दी कहानी साहित्य में स्त्री विमर्श *प्रो. डॉ. अनुराधा मिरगणे*	101–105
18	संवेदनशील कवि राजेश जोशी *प्रो. डॉ. अशोक मर्डे*	106–109
19	संस्कृत भाषा के ऐतिहासिक नाटक : शोधकार्य का एक उपेक्षित क्षेत्र *डॉ. विनोदकुमार वायचळ*	110–116
20	'अभंग–गाथा' नाटक में संस्कृति बोध का चित्रण *डॉ. बालाजी गरड़*	117–121
21	'चित्रलेखा' का शैलीवैज्ञानिक अध्ययन : चयन तत्व के संदर्भ में *डॉ. रमेश आडे*	122–126
22	21 वीं सदी : हिन्दी साहित्य के समक्ष चुनौतियाँ *डॉ. दरेप्पा बताले*	127–134
23	वैश्वीकरण और हिन्दी : स्थिति और दिशा *डॉ. दत्तात्रय फुके*	135–140
24	सूर्यबाला कृत 'दीक्षांत' उपन्यास में अभिव्यक्त अस्थायी अध्यापक की व्यथा *डॉ. कन्नुलाल विटोरे/ प्रा. रामहरी काकड़े*	141–145
25	प्रेमचंद की 'कफ़न' कहानी *डॉ. महादेव खोत*	146–149
26	वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में कबीर की मानवतावादी दृष्टि *डॉ. नवनाथ गाडेकर*	150–154
27	जयशंकर प्रसाद के नाटकों में अभिव्यक्त दार्शनिक विचारधारा *डॉ. रूपचंद खराडे*	155–159

सूर्यबाला कृत 'दीक्षांत' उपन्यास में अभिव्यक्त अस्थायी अध्यापक की व्यथा

डॉ. कन्नुलाल विटोरे
प्रा. रामहरी काकडे

समकालीन महिला कथाकारों में सूर्यबाला का नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है। उनका समग्र साहित्य उनके सीधे–साधे व्यक्तित्व का आइना है। वे उपन्यास या कहानी लिखती नहीं, अपितु पाठक को अंतरंग घनिष्ठता में लेकर कहानी सुनाती हैं। उनका कथा–साहित्य सीधे जीवन से जुड़ा हुआ है। वर्तमान समय की विद्रुपताओं को उन्होंने अपने उपन्यासों तथा कहानियों में अभिव्यक्त किया है। पारिवारिक जीवन, पति–पत्नी संबंध, नारी मन की पीड़ा, नौकरी पेशा व्यक्ति की समस्याएँ, बेरोजगारी, गाँव तथा शहर को नापकर शिक्षा व्यवस्था, साहित्य, संस्कृति तथा मन–मानस का यथार्थवादी चित्रण उनके कथा–साहित्य की अपनी विशेषता है। अब तक सूर्यबाला के ग्यारह कहानी संग्रह तथा पाँच उपन्यास प्रकाशित हो चूके हैं। 1992 में प्रकाशित उपन्यास 'दीक्षांत' में उन्होंने देश के अस्थायी अध्यापकों की ज्वलंत समस्या का चित्रण किया है । आज वर्तमान समय में देश में लाखों की तादात में अस्थायी अध्यापक हैं। जो अभावग्रस्त जीवन जीते हैं। शासन–प्रशासन के चपेट में उनकी अवस्था खास्ताहाल हो चूकी हैं। वे मानसिक एवं शारीरिक स्तर पर लहू–लूहान हैं इस महत्वपूर्ण विषय को केंद्र में रखकर उन्होंने अस्थायी अध्यापकों की मूक–व्यथा को वाणी दी है। शिक्षा जैसे पवित्र क्षेत्र में पनपते भ्रष्टाचार एवं अविवेकशीलता पर करूणातम रूप में अभिव्यक्ति दी है ।

सूर्यबाला ने 'दीक्षांत' उपन्यास में अस्थायी अध्यापक शर्मा सर के माध्यम से देश के सभी अध्यापकों के जीवन का सच, उनकी आर्थिक स्थिति तथा मनस्थिति का करूण चित्रण किया हैं। विद्याभूषण शर्मा सर राधिका देवी बिसारिया कॉलेज में अस्थायी अध्यापक हैं। उनके पास सारी शैक्षिक योग्यता हैं। वे एम. ए., पी–एच. डी. हैं। फिर भी ज्यूनियर कॉलेज में पढ़ाते हैं। पहनने के लिए अच्छे कपड़े नहीं हैं। छात्र कॉलेज में उनका मजाक उड़ाते हैं तब उनकी मनस्थिति कुछ इस प्रकार होती हैं। "और यह भी तो

नही हो सकता न कि सीधे ऊपर जाकर स्टाफ रूम के सुपरवाइजर से या वाइस प्रिंसिपल ऑफिस मे शिकायत दर्ज करें कि आज लड़कों ने मुझ पर 'रंगासियार' का कमेंट मारा या आज 'ब्लू जैकाल' की फब्ती कसी– बिलकुल जैसे अपने हाथों अपनी इज्जत उछालना हो गया।'[1]

शर्मा सर आदर्शवादी अध्यापक हैं। तन–मन से विद्यार्थियों को पढ़ाते हैं परंतु अस्थायी होने के कारण वेतन कम मिलता हैं, जिससे परिवार की जरूरतें पूरी नही होती हैं। वे स्थायी होने की सोचते हैं। उनकी लालसा, इच्छा यही कि एक बार स्थायी हो जाए तो आराम से जिंदगी बसर हो जाए। वे मन ही मन सोचते हैं कि, "लेकिन आह..... यह जो मन हैं न, अबोध, हठी, यही नहीं समझता ... लाख फुसलाओ–बहलाओ, वापस फिर उसी आहत अभिमान से रो उठता हैं..। एक अलभ्य दुर्लभ चीज के लिए। वे रह जाते हैं वापस अकेले–अकेले से अवचेतन में एक उखड़ी व्यग्र भटकती–सी मनःस्थिति लिये और इन सारे उहापोह के बीच भी एक दयनीय लालसा, बल्कि एक हठीला सपना पंख पसारे रहता हैं..... वहीं –अलभ्य, दुर्लभ चीज या सपना.... शायद इस साल परमनेंट हो ही जाऊँ।'[2]

शर्मा सर के मन की मात्र एक साध हैं कि स्थायी नौकरी हो जाए। यह तड़प, बिडंबना इस देश के लाखों अध्यापकों की हैं। वे मन में यही विचार करते हैं। अपने परिवार में में पत्नी कुंती तथा दोनों बेटे और बूढ़े माता–पिता। इन सभी का दायित्व पूर्ण रूप से वे निभा नहीं पाते है। ट्यूशन पढ़ाते हैं तो वे लोग उन्हें नौकरों–सा काम करने लगाते हैं। कॉलेज में अध्यापकों का दूसरा वर्ग ऐसा हैं कि जो आर्थिक रूप से पूर्ण हैं। 'स्टाफ रूम में शर्मा सर अपनी बात पूरे आत्मविश्वास से कह नहीं पाते हैं। निराश, हताश दुःखी रहते हैं। यहाँ तक कि अपने दोनों बच्चें की जरूरतों को भी वे पूरा नहीं कर पाते। उनकी पत्नी फटा हुआ ब्लाऊज पहनती है। आर्थिक अभाव उनके मनिस्थिति को बिगाड़ देता हैं।'

"एकदम जैसे उबाल आ गया हो। मन किया, चादर फेके, बुशर्ट चप्पल ड़ाल सीधे भागते हुए स्कूल के खचाखच भरे हाल के दर्शकों को धकियाते हुए पहुंच जाये। सजे–धजे स्टेज पर और नौकर बन झिल्ले कपडों में रिरियाते, दुबले, साँवले, विमलभूषण शर्मा को बाँह पकड़कर स्टेज के नीचे घसीट लायें, खूब खलबली मचाये स्कूल में चारों तरफ हाय–तोबा हो...और बीचोबीच वे जी खोलकर हंसे–प्रतिशोध.... स्कूल के प्रिंसिपल हड़बड़ाये हुए आये।"[3]

हमारे देश के शिक्षा संस्थानों मे इमानदार, मेहनती, कर्तव्यदक्ष अध्यापकों के जीवन से खिलवाड़ होती हैं। उनका अपमान किया जाता हैं। शर्मा सर हिन्दी विभाग में उच्च दरियता प्राप्त है उसी विभाग में भी गुप्ता जी एम. ए. थर्ड क्लास पास हैं लेकिन विभागाध्यक्ष हैं। वे शर्मा सर की उच्च योग्यता पर जलते हैं और उनके खिलाफ छात्रों द्वारा साजिशें रचवाते हैं। शर्मा सर का ओवर क्वॉलिफाईड होना सभी को अखरता हैं और वे किसी मिडिल या प्राइमरी स्कूल में परमानेंट नौकरी पाने की बात करते हैं।

उनके मन में निरंतर अंत
उनके उपर अपनी मोटार
के लिए धमकी देता हैं।
पडते हैं वे तो बस अपने
उनकी नियति बन जाती
मान–अपमान से ज्यादा उ
किसी तर हाँ–हूँ जल्दि से
ही सही परमानेंट होने की
अब इस पचड़े में पड़कर
जुड़वाने का खतरा कौन म

शर्मा सर में
परिस्थिति का सामना करत
हैं। परंतु उसी कॉलेज में
हैं। महिला प्राध्यापिकाओं
मशगुल रहती हैं। उनमें स
भ्रष्ट हैं। प्रिंसिपल राजदा
खिलाड़ी हैं। वे शर्मा सर
नहीं हैं। घर में कॉलेज व
सर अपनी पत्नी पर क्रोध
हैं। वे असहाय, लाचार,
उन्हें ध्वस्त कर देती हैं।
भी नहीं सकते। बस भ
हजारों–लाखो लोग भी इ
कर लेते हैं। "क्यों इस त
अकेला तो नहीं। कौन ऐ
नहीं रहा। जो मुझ पर गु
लिये सुखी आँखे, पपड़ाये
खा लें क्लर्को पर, बारह–
पर..पढ़ाने के नाम पर मा
मिलाकर रोजी–रोटी की
तिलका ताड़ बनाये दे
कनोवेश हर किसी के
सिर्फ–सिर्फ कुछ अदद व
स्पष्ट होती हैं कि आज व
दें तो सभी इसी अवस्था
स्थिति के प्रति आक्रोश
कॉलेज में मुक्त, बिंदास
उनको देख मन ही मन
निश्चिन्तता और निर्द्वन्द्व, f

उनके मन मे निरंतर अंर्तद्वंद्व पलता रहता हैं। रतन वरूआ नामक छात्र उनके उपर अपनी मोटार कार से कीचड़ उछालता हैं। परीक्षा में अच्छे अंको के लिए धमकी देता हैं। अस्थायी अध्यापक कॉलेज की राजनीति में नहीं पडते हैं वे तो बस अपने काम से काम करते हैं। मान–अपमान सहना मात्र उनकी नियति बन जाती हैं। "अस्थायी नियुक्ति वाले अध्यापकों को उनके मान–अपमान से ज्यादा अपनी रोजी–रोटी की पड़ी थी। सामना पड़ने पर किसी तर हाँ–हूँ जल्दि से बगले झाँकेते निकल जाते। चार–छह साल बाद ही सही परमानेंट होने की उम्मीद की होड़ा–होड़ी तो सभी के अंदर थी। अब इस पचड़े में पड़कर अपना नाम, गुटवंदी और पॉलिटिक्स के साथ जुड़वाने का खतरा कौन मोल लें?"[4]

शर्मा सर में अपने पिता के संस्कार आज भी मौजूद हैं। वे परिस्थिति का सामना करते हैं, सत्य, त्याग, निष्ठा आदि संस्कारों को मानते हैं। परंतु उसी कॉलेज में अन्य स्थायी अध्यापक गण विपरित आचरण वाले हैं। महिला प्राध्यापिकाओं का एक वर्ग हैं जो नित–नए फैशन की चर्चा में मशगुल रहती हैं। उनमें सादगी का नाम तक नहीं हैं। यहाँ का प्रशासन की भ्रष्ट हैं। प्रिसिंपल राजदान, मैनेजिंग कमिटी के सदस्य सभी राजनीति के खिलाड़ी हैं। वे शर्मा सर जैसे अस्थायी अध्यापकों के दुःख दर्द को समझते नहीं हैं। घर में कॉलेज की परेशानियों का परिणाम यह होता हैं कि, शर्मा सर अपनी पत्नी पर क्रोध प्रकट करते हैं। उनका समूचा व्यक्तित्व खंड़ित हैं। वे असहाय, लाचार, और दयनीय बन जाते हैं। कॉलेज की राजनीति उन्हें ध्वस्त कर देती हैं। वे किसी को अपनी विपत स्थिति की गाथा सूना भी नहीं सकते। बस भोगते हैं यहीं उनकी नियति हैं। अपनों जैसे हजारों–लाखो लोग भी इसी अवस्था में हैं यह सोच अपने दुःख को हलका कर लेते हैं। "क्यो इस तरह तिल–तिलकर घूटता चला जा रहा हूँ मैं....? मैं अकेला तो नहीं। कौन ऐसा हैं जो आज इस दहशत और आतंक में पिस नहीं रहा। जो मुझ पर गुजर रहीं हैं। बी.ए., एम., की डिग्रियों का पुलिंदा लिये सुखी आँखे, पपड़ाये होंठो, काम तलाशते युवकों पर, बॉस की झिडकी खा लें क्लर्को पर, बारह–बारह घण्टे की मजदूरी और बेगार करते मजदूरों पर..पढ़ाने के नाम पर मालदार लड़कों की चाकरी बजाते ट्यूटरों पर कुल मिलाकर रोजी–रोटी की जुगाड़ से जूझते हर आदमी पर३मैं बिना बात तिलका ताड़ बनाये दे रहा हूँ। अपनी समस्या को। ऐसा ही होता हैं कमोबेश हर किसी के साथ। हर आदमी ऐसे ही जीता जाता हैं। सिर्फ–सिर्फ कुछ अदद लोगों को छोड़कर।"[5] उपर्यूक्त कथन से यह बात स्पष्ट होती हैं कि आज देश में बेरोजगारी तथा कुछ अदद लोगों को छोड दें तो सभी इसी अवस्था में जीवन यापन करते हैं । शर्मा सर अपनी विपत स्थिति के प्रति आक्रोश प्रकट करते हैं। कुछ अन्य अध्यापकगण उसी कॉलेज में मुक्त, बिंदास तथा निर्भयता से जीवन जीते हैं, तब शर्मा सर उनको देख मन ही मन कुढ़ते हैं। "वाह! कितना स्वर्गीय सुख, कितनी निश्चिन्तता और निर्द्वन्द्व, निर्भयता है, अधिकार और दबदबे के साथ जीने में!

कब? आखिर कब जी सकेंगे वे एक आश्वस्तीपूर्ण, निर्द्वन्द्व और सुरक्षित जीवन! आतंक, उपेक्षा और विद्रुप भरे अहसासों से मुक्त।"[6] जिस जीवन की कल्पना वे करते है, वह मात्र उनके लिए कल्पना हैं। आतंक, उपेक्षा और विद्रुप भरा अहसास मात्र हैं। जिससे मुक्ति नहीं हैं। वे अपनी इमानदारी त्याग नहीं सकते। एम. ए., पी–एच. डी. होने के बावजूद भी स्नातक स्तर पर अध्यापन नहीं कर सकते। सम्पूर्ण कॉलेज उनके खिलाफ षडयंत्र रचता है। कारण मात्र यह हैं कि रतन बरूआ नामक छात्र को वे फेल कर देते हैं जिसमें योग्यता नही हैं कि वह हिन्दी जैसे विषय में अच्छे अंक प्राप्त कर सके। अंत में शर्मा सर को राधिका देवी बिसारिया कॉलेज से निकलवा देते हैं। तब उनके सामने परिवार का चित्र खड़ा हो जाता हैं। वे निराश हो जाते हैं और अपने–आपको ढ़ाढस बाँधते हुए कहते हैं। "नहीं! नहीं! नही !!! पागल मत बनो विद्याभूषण शर्मा यह तुम्हे एकाएक क्या होता जा रहा है। इतना भय, इतनी दहशत...तुमने तो अपनी जिंदगी की हर सबक संघर्ष के बीच ही पढ़ा है, हर कदम पर ठोंकरे ही खायी हैं। सफर के हर रास्ते ने तुम्हारे लिए खाइयाँ ही खोदी हैं लेकिन घबराये थे तुम कभी इस तरह।"[7]

सोचते–सोचते शर्मा सर अपना मानसिक संतुलन खो बैठते हैं और नीचे पानी में गीर जाते है। कुछ लोग उन्हें वहां से निकाल अस्पताल पहुँचा देते हैं। अब वे मानिसक रूप से कमजोर हो जाते हैं। उन्हें अपना अतीत याद आता हैं। पिताजी के संस्कार अध्यापन करते समय के क्षण। अंत में शर्मा सर की मृत्यु हो जाती हैं।

डॉ. शुकदेव सिंह–दीक्षांत उपन्यास के बारे में अपने मौलिक विचार स्पष्ट करते हुए कहते हैं, "सूर्यबाला ने शिक्षा–संस्कृति की इस तौहिन को गंभीर करूणा के भीतर सृजित करने का प्रयत्न किया है। इस बात पर बल देने की जरुरत है, क्योंकि सूर्यबाला व्यंग्यकार है। उनके पास बहुत चलती–फिरती स्थूल हरकतों को व्यंग्य में दाग देने की अद्‌भूत वाकपटुता हैं। वे पात्रों के भीतर धँसकर बोलती है और परिस्थितियों के चलन की भाषा को बड़ी बारीकी से पकड लेती है। 'थाली भर चाँद' के पाठकों को उनकी व्यंग्य की धुरी की याद होगी। वे श्री लाल शुक्ल से कम नट नहीं हैं, लेकिन वे कौन–सी परिस्थितियाँ है कि 'दीक्षांत' तक आते–आते वे अपनी नट क्रिया को दिशांतरित करती हैं, अचानक गंभीर और करूण हो जाती है। 'हर चीज को बडे चुलबुल अंदाज' में करनेवाली लेखिका निर्वाक और हतप्रभ हैं। सैम्प्यूअल बेकेट को जब नोवेल पुरस्कार मिला था तो यह बात सामने आई थी कि दुख अपनी चरम पराकाष्ठा पर पहुँचकर हास्य के भीतर पहुँच जाता हैं, लेकिन ऐसा लगता है कि किसी समाज की हास्यास्पद स्थितियाँ, उस समाज के मूल्यों का बहुत ही व्यंग्यात्मक ढंग से टूटना एक बडे अवसाद को भी रचता है। यदि व्यंग्य के पीछे अवसाद होता है तो अवसाद के पीछे भी व्यंग्य हो सकता है। इस प्रक्रिया को समझ लेने के बाद 'दीक्षांत' को उनके संपूर्ण रचना कर्म के भीतर रखकर समझा जा सकता हैं।"[8] सूर्यबाला ने इसी अवसाद करूणा को तीव्रतम भावों से

उजागर किया हैं। शर्मा सर
किया जाता हैं। ऊपर उनके
छात्रों को पास नहीं आने देते
वे सभी जिम्मेदार थे। अंत
बच्चों के साथ गॉव जाने के
पिता वहाँ आकर गुरू दक्षिण
भार लेते हैं।

प्रस्तुत उपन्यास में
को व्यक्त किया है । शिक्षा–
के प्रासंगिक विमर्शों मे यह
शिक्षा संस्थान आखिर कब
इमानदार अध्यापक को न्याय
सीमा नहीं हैं। सूर्यबाला ने
अस्थायी अध्यापकों के मूक–
किया हैं। अध्यापक समाज
रखनेवाला महत्वपूर्ण अंग हैं।
खिलवाड़ होता रहा तो सामा

संदर्भ सूची :

1. दीक्षांत – सूर्यबाल
2. पृष्ठ क्र. 04
3. वही, पृष्ठ क्र. 08
4. वही, पृष्ठ क्र. 38
5. वही, पृष्ठ क्र. 65
6. वही, पृष्ठ क्र. 74
7. वही, पृष्ठ क्र. 76
8. वही, पृष्ठ क्र. 98

उजागर किया हैं। शर्मा सर की मृत्यू के पश्चात उनका अंतिम संस्कार किया जाता हैं। ऊपर उनकी पत्नी कुंती उस कॉलेज के अध्यापक तथा छात्रों को पास नहीं आने देती हैं क्योंकि प्रत्यक्ष रूप से इस हालात के लिए वे सभी जिम्मेदार थे। अंत में कुंती अपना सामान रिक्शे में लादकर अपने बच्चों के साथ गाँव जाने के लिए निकलती हैं तव उसी समय विजयेंद्र के पिता वहाँ आकर गुरू दक्षिणा के रूप में विनय और बिल्लू की शिक्षा का भार लेते हैं।

प्रस्तुत उपन्यास में सूर्यबाला ने योग्यता वाले अध्यापक की पीड़ा को व्यक्त किया है । शिक्षा–व्यवस्था पूरी तरह सड चूकी है वर्तमान समय के प्रासंगिक विमर्शो में यह एक महत्वपूर्ण अंश हैं। हमारी शिक्षा व्यवस्था, शिक्षा संस्थान आखिर कब पवित्रता से काम करेंगे? कब योग्यता वाले, इमानदार अध्यापक को न्याय मिलेगा? अस्थायी अध्यापको के दुःख की कोई सीमा नहीं हैं। सूर्यबाला ने शर्मा सर के माध्यम से इस देश के लाखों अस्थायी अध्यापकों के मूक–व्यथा–कथा को वाणी देने का सार्थक प्रयास किया हैं। अध्यापक समाज को बनाने वाला उसके तत्वों को जीवंत रखनेवाला महत्वपूर्ण अंग हैं। समाज में यदि अध्यापकों के जीवन से ऐसा खिलवाड़ होता रहा तो सामाजिक आदर्शों को गहरा सदमा पहूँच सकता हैं।

संदर्भ सूची :

1. दीक्षांत – सूर्यबाला – नॅशनल पब्लिशिंग हाऊस –
2. पृष्ठ क्र. 04
3. वही, पृष्ठ क्र. 08
4. वही, पृष्ठ क्र. 38
5. वही, पृष्ठ क्र. 65
6. वही, पृष्ठ क्र. 74
7. वही, पृष्ठ क्र. 76
8. वही, पृष्ठ क्र. 98